पूज्य लालचंदभाई के प्रवचन
श्री समयसार कलश २७१
प्रवच रत्नाकर भाग ११, पृष्ट ५७१-५७७
राजकोट, सितंबर-अक्टूबर १९९०
प्रवचन LA ३९६

ऐसा जानने में आता है लेकिन ये छह द्रव्य मुझे जानने में नहीं आते क्योंकि मेरा लक्ष वहाँ से छूट गया है। लक्ष अंदर में आ गया है - अनुभव के काल में, निर्विकल्प ध्यान के काल में, और जितना अनुभव है उतना ही धर्म है।

मुमुक्षुः- उतना ही धर्म है।

उत्तरः- उतना ही धर्म है। जितना आत्मा अनुभव में आता है और वीतराग पर्याय प्रगट होती है उतना ही धर्म है। पर के लक्ष से तो राग होगा।

मुमुक्षुः- स्वभाव में है उतना ही धर्म है। बाकी तो...

उत्तरः- स्वभाव से बाहर जाये तो अधर्म है।

मुमुक्षुः- इन्द्रियज्ञान है वह अधर्म?

उत्तरः- अज्ञान है। क्योंकि.. अज्ञान किसलिए? क्योंकि इन्द्रियज्ञान आत्मा को जानता ही नहीं। इसलिए अज्ञान, ऐसा! लोग क्या कहते हैं? पर को जानता है इसलिए ज्ञान। ज्ञानी क्या कहते हैं? कि इन्द्रियज्ञान स्व को नहीं जानता न इसलिए हम उसे अज्ञान कहते हैं। हमारी व्याख्या तू सुन जरा। तू ऐसे ले रहा है कि पर को जानता हूँ इसलिए ज्ञान हुआ मुझे। हम कहते हैं कि इन्द्रियज्ञान स्व को जानता नहीं, इसलिए हम उस अपेक्षा से अज्ञान कहते हैं। हमारी अज्ञान की व्याख्या तू सुन। इन्द्रियज्ञान स्व को नहीं जानता न? तेरे पास इन्द्रियज्ञान तो अनादि का है। आत्मा जानने में आया? कि नहीं।

मुमुक्षुः- भेदरूपी ज्ञान हुआ।

मुमुक्षुः- वह भेद करता है।

उत्तरः- तो वह अज्ञान ही है। जिस ज्ञान में आत्मा ज्ञात न हो उसे ज्ञान कौन कहे?

मुमुक्षुः- वह अज्ञान है।

उत्तरः- अज्ञान कहलाता है। यह मैं अभी पढ़कर आया था और उसमें (ये) कुदरती आ गया।

मुमुक्षुः- भाई! यह किसी को ...

उत्तरः- कोई विरला (ही यह समझे)! समझ गये? स्वपरप्रकाशक प्रमाणज्ञान में से निश्चय निकालना, ज्ञान की पर्याय के प्रमाण में, स्व और पर प्रकाशक वह प्रमाणज्ञान का वाक्य है। उसमें से निश्चय निकालना कि ज्ञान स्व को जानता है और पर को नहीं जानता तब ज्ञान अंदर में झुककर अनुभव होता है। निश्चय-व्यवहार है ज्ञान की पर्याय, स्व को भी जाने और पर को भी जाने,

स्वपरप्रकाशक। उसमें से, प्रमाण में से ऐसा निकालना कि मेरा ज्ञान मेरी आत्मा को जानता है और पर को नहीं। ऐसा अस्ति-नास्ति अनेकांत करता है तब उपयोग अंदर में झुक जाता है, अनुभव हो जाता है। वह अनुभवी कहता है कि छह द्रव्यों को नहीं जानता - मेरे ज्ञेय ही नहीं हैं।

मुमुक्षुः- क्योंकि जो अनुभव में आता है वह ज्ञेय है।

उत्तरः- वह (आत्मा) ज्ञेय है।

मुमुक्षुः- छह द्रव्य अनुभव में नहीं आते।

उत्तरः- नहीं।

मुमुक्षुः- छह द्रव्य संबंधी ज्ञान अनुभव में नहीं आता।

उत्तरः- नहीं।

मुमुक्षुः- इसलिए (छह द्रव्य) वे ज्ञेय नहीं हैं।

उत्तरः- ज्ञेय नहीं हैं। जो अनुभव में आता है वह तो ज्ञान है, उतना ज्ञेय है, आहाहा! आनंद अनुभव में आता है तो इतना ज्ञेय है। छह द्रव्य अनुभव में नहीं आते, भिन्न रह जाते हैं। अनुभव के काल में। उपयोग अभिमुख अंदर में आ जाता है।

मुमुक्षुः- कितना स्पष्ट है। अमृत है अमृत।

उत्तरः- आहाहा! इसप्रकार (आत्मा) अनुभव में आता है, और छह द्रव्य ज्ञेय ऐसा अनुभव में नहीं आता। आत्मा ज्ञेय ऐसा तो अनुभव होता है, लेकिन छह द्रव्य ज्ञेय ऐसा अनुभव नहीं होता। मेरे उपकारी गुरु ज्ञेय- ऐसा अनुभव में नहीं आता। मेरे (ज्ञेय) साक्षात् तीर्थंकर परमात्मा, दिव्यध्वनी, वाणी, ऐसा अनुभव में नहीं आता।

मुमुक्षुः- सब अज्ञान है।

मुमुक्षुः- तीर्थंकर भगवान मेरे ज्ञेय नहीं। देखो तो सही!

उत्तरः- नहीं-नहीं हों! तीर्थंकर भगवान मेरे ज्ञेय नहीं।

मुमुक्षुः- जिनका मुझे स्वभाव की साधना में उपकार है, वे भी मेरे ज्ञेय नहीं हैं।

उत्तरः- मेरे ज्ञेय नहीं। यदि उन्हें ज्ञेय बनाओगे तो तुम्हारी आत्मा जानने में नहीं आयेगी। तो अलका ज्ञेय कहाँ रही? अलका तो ज्ञेय कहीं की कहीं रह गई।

मुमुक्षुः- कहीं दूर रह गई।

उत्तरः- दूर रह गई। साक्षात् जो उपकारी तीर्थंकर परमात्मा वंदनीय हैं, हें, पूजनीय-पूजनीय संपूर्ण, हें? लेकिन जबतक तू उन्हें जानेगा न, रुकेगा न, तबतक तुझे आत्मा जानने में नहीं आएगा। ऐसा सर्वज्ञ भगवान की वाणी में आया कि तू तुझे जान। **परदव्वादो दुग्गई** परद्रव्य के ऊपर लक्ष रहेगा न, (तो) तेरी दुर्गति, खराब गति होगी। गुरुदेव तीर्थंकर की बात बारंबार कहते थे कि तीर्थंकर के सामने लक्ष करेगा न तो तेरी दुर्गति होगी। तीर्थंकर का उत्कृष्ट दृष्टांत देते थे, लेकिन हमारे उपकारी हैं तो नहीं देखना उनके सामने? कि देखना बंद कर।

मुमुक्षुः- बंद करेंगे तब वे उपकारी होंगे।

उत्तरः- बस! तब उपकारी कहलाते हैं। अंदर में जाता है वहाँ (देखना) बंद करता है। यहाँ

अनुभव होता है फिर सविकल्प दशा में आया, आहाहा! आपके वचन से मुझे....

मुमुक्षुः- तब गुरु और देव उपकारी कहलाते हैं।

उत्तरः- उपकारी कहलाते हैं।

मुमुक्षुः- तब वह भाव नमस्कार हुआ?

उत्तरः- (ना।) वह भाव नमस्कार अंदर हुआ। फिर द्रव्य नमस्कार आता है। पहले निश्चय। भाव नमस्कार, अपने ज्ञान में अपना आत्मा जानने में आया-अनुभव में आया वह भाव नमस्कार। फिर सविकल्पदशा में आने पर, अरे! आपके शब्दों से ही मुझे आत्मा का अनुभव हुआ। आपने मुझे आत्मा दिया। ऐसा बोलता है। उपकार भुलाता नहीं, सज्जन। आपकी वाणी से ही मुझे आत्मा की प्राप्ति हुई। प्रभु! आपने ही मुझे आत्मा दिया, ऐसे, ऐसे। ऐसा ही होता है न? वह द्रव्य नमस्कार, द्रव्य नमस्कार बंध का कारण। भाव नमस्कार मोक्ष का कारण।

मुमुक्षुः- जो भाव उठता है फिर वह भी वापस बंध का कारण।

उत्तरः- बंध का कारण। पक्का द्रव्य नमस्कार।

मुमुक्षुः- एकदम स्पष्ट बात है न!

उत्तरः- स्पष्ट बात है, बेन।

मुमुक्षुः- जीव की योग्यता।

उत्तरः- बस, जीव की योग्यता! (जिस) जीव की योग्यता होगी उसको (यह बात) जंचेगी वरना नहीं जंचेगी । वह तो उसका काल पकेगा तब बैठेगी, इसप्रकार हमें मानना। आज नहीं बैठती, तो कल बैठेगी। सभी प्राप्त करेंगे। भगवान आत्मा हैं। आज काल नहीं पका है तो कल पकेगा, आहाहा! आत्मा ज्ञेय होता है तब छह द्रव्य मेरे ज्ञेय नहीं होते। अनुभवी पुरुष लिखते हैं। क्यों? क्यों नहीं जानने में आते मुझे? **परमार्थ से पर के साथ ज्ञेय-ज्ञायक संबंध है ही नहीं।** आहाहा! व्यवहार से ज्ञेय-ज्ञायक संबंध में रुक जायेगा तो आत्मा का अनुभव नहीं होगा, ऐसा!

कहते हैं - 'ज्ञानमात्र भाव जाननक्रियारूप होने से ज्ञानस्वरूप है'। अब ज्ञान की बात करते हैं। ज्ञान, ज्ञेय और ज्ञाता है न? उसमें ज्ञान की व्याख्या करते हैं। कि ज्ञान किसे कहना? ज्ञेय किसे कहना और ज्ञाता किसे कहना? **देखो, क्या कहा? कि जगत के ज्ञेयों को जाननेरूप जाननक्रिया ज्ञानस्वरूप है, ज्ञेयस्वरूप नहीं है।** जो छह द्रव्य जानने में आते हैं, वो स्वयं का ज्ञान है, वे ज्ञेय नहीं हैं। **ज्ञान की पर्याय में जो छह द्रव्य जानने में आते हैं, वास्तव में वे छह द्रव्य जानने में नहीं आते।** जानने में आते हैं और जानने में नहीं आते। यह कौन समझेगा? कौन? जानने में आते हैं और जानने में नहीं आते। तब वास्तव में क्या जानने में आता है? कि ज्ञान।

मुमुक्षुः- ज्ञान जानने में आता है।

मुमुक्षुः- भाई! यह कला है।

उत्तरः- यह तुम, बेन! यह तुम (देखो)। सब शांति से विचारे तो सही। कोई ध्यान देकर गुरुवाणी को समझता ही नहीं है। यह देखो, **ज्ञान की पर्याय में छह द्रव्य जानने में आते हैं,** प्रतिभासित होते हैं, झलकते हैं, ऐसा रखा है न? **वास्तव में वे छह द्रव्य जानने में नहीं आते;** जानने में आते हैं और

जानने में नहीं आते! यह क्या?

मुमुक्षुः- जानने में आते हैं फिर भी असल में जानने में नहीं आते।

उत्तरः- वह क्या? वे जानने में आते हैं ऐसा कहते हो और वे जानने में नहीं आते? तो दोनों में से एक बात करो न? दो बात किसलिए करते हो? या ऐसा कहो कि जानने में आते हैं या ऐसा कहो कि जानने में नहीं आते। ना - जानने में आते हैं लेकिन जानता नहीं। जानने में आते हैं लेकिन जानता नहीं, आहाहा! देखता है फिर भी नहीं देखता, चलता है फिर भी नहीं चलता, आहाहा! बोलता है फिर भी नहीं बोलता, (तत्त्वस्थित अडोल)।

मुमुक्षुः- तत्त्वस्थित अडोल।

उत्तरः- तत्त्वस्थित अडोल! अहाहा! गजब की बात है। जानने में आता है और जानता नहीं! यह क्या लेकिन? जानने में आता है और जानता नहीं?

मुमुक्षुः- लक्ष नहीं है न इसलिए जानता नहीं है।

उत्तरः- जानने में आता है लेकिन जो जानने में आता है उसके ऊपर लक्ष नहीं है। तब- तब- तब क्या कहते हैं? कि जानने में आते हैं वो वास्तव में **ज्ञान की पर्याय में छह द्रव्य जानने में आते हैं, वास्तव में वे छह द्रव्य जानने में नहीं आते;** आत्मा जानने में आता है, क्योंकि आत्मा के ऊपर लक्ष है। **बल्कि छह द्रव्य संबंधी अपना ज्ञान ही जानने में आता है** ज्ञान जानने में आता है, छह द्रव्य जानने में नहीं आते। **और वह ज्ञान ही निश्चय से आत्मा का ज्ञेय है।** ज्ञान की पर्याय जो हुई, आत्मा को जाननेवाली, वह ज्ञेय है। **परज्ञेय ज्ञान में ज्ञात होते हैं - ऐसा कहना तो व्यवहार है।** परज्ञेय जानने में आते हैं रागादि, देहादि, ऐसा कहना व्यवहार है, अर्थात् कि ऐसा नहीं है।

मुमुक्षुः- अर्थात् वे जानने में नहीं आते।

उत्तरः- जानने में नहीं आते। जानने में आते हैं (और) वह जानता नहीं। ये क्या? जानने में आते हैं और जानने में नहीं आते। जानने में आते हैं और जानता नहीं ऐसा नहीं, जानने में आते हैं और जानने में नहीं आते।

मुमुक्षुः- कमाल की बात है। जानने में आते हैं और जानने में नहीं आते।

उत्तरः- गजब की बात है न? यह कौन कह सकता है ज्ञानी के सिवाय? आहाहा!

मुमुक्षुः- कहा जाता है कि जानने में आते हैं लेकिन असल में वे जानने में नहीं आते।

उत्तरः- जानने में नहीं आते। ज्ञान जानने में आता है, ऐसा!

मुमुक्षुः- भाई! वास्तव में ज्ञान ही जानने में आता है।

उत्तरः- ऐसा ही है न? ज्ञान के साथ तादात्म्य है न आत्मा। ये कहाँ जानने में आता है?

मुमुक्षुः- ज्ञेय ज्ञान को ही प्रसिद्ध करता है।

उत्तरः- हाँ। ज्ञेय ज्ञान को ही प्रसिद्ध करता है, आहाहा! ज्ञान तो आत्मा को प्रसिद्ध करता है लेकिन ज्ञेय भी आत्मा को प्रसिद्ध करते हैं। **बल्कि छह द्रव्य संबंधी अपना ज्ञान ही जानने में आता है और वह ज्ञान ही निश्चय से आत्मा का ज्ञेय है। परज्ञेय ज्ञान में ज्ञात होते हैं- यह कहना तो व्यवहार है। ज्ञेयसंबंधी अपनी जो ज्ञानपर्याय जाननेरूप हुई है, वही ज्ञान का ज्ञेय है।** ज्ञान ज्ञेय है,

परज्ञेय नहीं। ज्ञान स्वयं का है वह ज्ञेय है। ज्ञान के द्वारा ज्ञान जानने में आता है। ऐसा! **परज्ञेय नहीं। क्योंकि अपने में अपनी ज्ञानपर्याय का अस्तित्व है (पर का नहीं)। आहाहा! छह द्रव्यों को जाननेवाली ज्ञान की पर्याय अपनी है, उसे छह द्रव्य का ज्ञान कहना व्यवहार है।** छह द्रव्य का ज्ञान हुआ ऐसा कहना वह व्यवहार है और आत्मा का ज्ञान हुआ ऐसा कहना वह निश्चय है।

मुमुक्षुः- वह सत्य है।

उत्तरः- आत्मा का ही ज्ञान होता है। छह द्रव्य का ज्ञान ही नहीं होता। ज्ञेय का ज्ञान निश्चय से ज्ञेय का नहीं है, **ज्ञेय का ज्ञान निश्चय से ज्ञेय का नहीं; किन्तु ज्ञान का ही ज्ञान है।** ज्ञेय जो ज्ञान में जानने में आते हैं वह उनका (ज्ञान) नहीं है लेकिन ज्ञान का ज्ञान है, आहाहा! **ज्ञातृक्रियारूपभाव ज्ञानस्वरूप है। पंडित जयचंदजी यही स्पष्ट करते हैं - और वह स्वयं ही निम्न प्रकार से ज्ञेयरूप है। 'स्वयं ही'।** ये ज्ञान की व्याख्या हो गई। अब ज्ञेय की व्याख्या। आत्मा ही ज्ञेय है। **बाह्य ज्ञेय ज्ञान से भिन्न हैं, वे ज्ञान में प्रविष्ट नहीं होते; ज्ञेयों के आकार की** अर्थात् स्वरूप की **झलक ज्ञान में पड़ने पर ज्ञान ज्ञेयाकाररूप दिखाई देता है,** ज्ञेयों की ज्ञान में झलक पड़ने पर, मानो ज्ञान ज्ञेयाकाररूप हो गया है, ऐसा दिखाई देता है। **परंतु वे ज्ञान की ही तरंगें हैं।** ज्ञेय की कल्लोलें नहीं हैं, ज्ञान की पर्याय है। ज्ञान की पर्याय है। भले निमित्तपने से वह हो। लेकिन ज्ञान की ही पर्याय है, इसप्रकार। **वे ज्ञान तरंगें ही ज्ञान के द्वारा ज्ञात होती हैं।** अर्थात् ज्ञान ही ज्ञान के द्वारा जानने में आता है, ज्ञेय नहीं। आहाहा!

उन ऊपर की चार लाइनों में सब आ गया। उसका विस्तार है। **देखो, आहाहा! देखो, बाह्य ज्ञेय - रागादि से लेकर छहों द्रव्य**, राग भी परज्ञेय, शरीर भी परज्ञेय, और छह द्रव्य भी परज्ञेय, **अपने आत्मा से अर्थात् (अपने द्रव्य-गुण-पर्याय -- तीनों से) जुदे हैं। यदि वे जुदे न हों तो एक हो जायें;** छहों द्रव्य एकमेक हो जायें, आत्मा के साथ। **किन्तु ऐसा तो कभी होता ही नहीं है।** एकमेक होते नहीं छह द्रव्य और आत्मा। छह द्रव्य भिन्न और आत्मा भिन्न है। राग भिन्न और आत्मा भिन्न। राग को ले लिया न? राग को परज्ञेय में ले लिया न? राग और आत्मा एकमेक नहीं हैं। राग अलग है आत्मा से। ज्ञान में राग आता नहीं है और ज्ञान दुःख का वेदन नहीं करता। दुःख को जानता भी नहीं। दुःख को वेदता भी नहीं और दुःख को जानता भी नहीं।

प्रेमचंदभाई की धर्मपत्नी (का) जब स्वर्गवास हुआ न तब राजेश का फोन आया था कि हमारी माताजी की अंतिम स्थिति लगती है, आप दो शब्द कहिए। उसने क्या किया कि मैं यहाँ से बोलता गया और उसने टेप में उतार लिया। और वही टेप लेकर एक घंटे बाद हॉस्पिटल में गया। फिर उन्हें सुनायी। अंतिम (वाणी)। पूरी कैसेट और फिर तीन-चार घंटे बाद तो स्वर्गवास हो गया। तब तक उन्हें जागृति थी, भली-भांति सुनी, हकार (स्वीकार) आता था। उस टेप में कहा है कि बहन! दुःख का वेदन तो नहीं होता! लेकिन दुःख जानने में भी नहीं आता। तुम दुःख के ऊपर से लक्ष उठा लो। मेरे ज्ञान में ज्ञायक जानने में आता है ऐसा ले लो। दुःख जानने में ही नहीं आता।

मुमुक्षुः- वेदना कितनी कम हो गई।

उत्तरः- कम हो गई, बस!

मुमुक्षुः- लक्ष अपनी तरफ, फिर वेदन हो तो भले हो।

उत्तरः- भले हो। आहाहा! मेरा लक्ष मैं उससे मोड़ लेता हूँ और अपने ज्ञान को आत्मा की तरफ ले जाता हूँ। मुझे जाननहार जानने में आता है। दुःख जानने में नहीं आता। वेदन में तो नहीं आता लेकिन जानने में भी नहीं आता, आहाहा! ऐसी बात की थी। समझ गए? उसने टेप भी बहुत लोगों को दी है।

मुमुक्षुः- सुनी है।

उत्तरः- सुनी है?

मुमुक्षुः- बहुत मजे की बात है।

उत्तरः- हाँ, बहुत मजे की। यहाँ तो फिर उसकी पूरी लिखित कॉपी हुई। और अनेक प्रतियाँ छपवाकर बहुत लोगों को उसने दी। खूब खुश हुए सभी। समाधिमरण नहीं, सावधान मरण है। सावधान मरण है। समाधिमरण सम्यग्दृष्टि को होता है।

मुमुक्षुः- हाँ मरण की भी कितनी सावधानी। कहीं उपयोग अन्यत्र नहीं।

उत्तरः- अन्यत्र नहीं। आ जाता है अंदर में।

मुमुक्षुः- मरण (के समय) में भी अपनी आत्मा का भान।

उत्तरः- आत्मा याद आया। आत्मा याद आना चाहिये, मरण के समय। हाँ!

मुमुक्षुः विकल्प के द्वारा भी अपना घूँटन करता है।

उत्तरः- घूँटन करता है।

मुमुक्षुः- मैं आत्मा हूँ- मैं आत्मा हूँ।

उत्तरः- मैं जाननहार हूँ।

मुमुक्षुः- मैं जाननहार हूँ

उत्तरः- ये दुःख मेरे से भिन्न है, मैं दुःख का वेदन करनेवाला नहीं हूँ। आहाहा! दुःख को जानता नहीं, वहाँ लक्ष छूट जाता है और जाननहार जानने में आता (है) ऐसे विचार में आ जाता है, विचार में । वहाँ दुःख घट जाता है। यह दुःख है न, इस दुःख के अस्तित्व से दुःखी नहीं होता लेकिन दुःख में जुड़ जाता है, एकत्व करता है, उसका दुःख है।

मुमुक्षुः- मुझे होता है उसका दुःख, उसका दुःख होता है।

उत्तरः- उसका दुःख होता है। हाँ! मेरा तो ज्ञान होता है, मेरे में तो। आहाहा! तो दुःख भाग जाता है, वेदन में ही नहीं आता। भेदज्ञान है न? भेदज्ञान। मूल भेदज्ञान से, जितने सिद्ध परमात्मा हुए, वे सभी भेदज्ञान से ही हुए हैं। यह मेरा आत्मा मुझे जानने में आता है, चार लाइन में, पर जानने में नहीं आता, (ये) भेदज्ञान है। ज्ञान की पर्याय में भेदज्ञान कर लिया उसने। ज्ञान की पर्याय में पर जानने में आता है और स्व जानने में आता है। उसमें- (भेदज्ञान किया कि) 'नहीं! स्व ही जानने में आता है, पर जानने में नहीं आता।' इतने में उपयोग अंदर में आ गया। अनुभव कर लिया।

मुमुक्षुः- उसका नाम भेदज्ञान है।

उत्तरः- भेदज्ञान हो गया।

मुमुक्षुः- ज्ञान पर से भिन्न पड़ा।

उत्तरः- भिन्न पड़ जाता है ज्ञान। पर का लक्ष छूट जाता है न ? पर का लक्ष छूटे तब अंदर में आये न?

मुमुक्षुः- पर का और अपना भेद किया।

उत्तरः- भेद किया।

और वह स्वयं ही निम्न प्रकार से ज्ञेयरूप है। बाह्य ज्ञेय ज्ञान से भिन्न हैं, ज्ञान में प्रविष्ट नहीं होते; ज्ञेयों के आकार की झलक ज्ञान में पड़ने पर ज्ञान ज्ञेयाकाररूप दिखाई देता है, परंतु वे ज्ञान की ही तरंगें हैं। वे ज्ञान तरंगें ही ज्ञान के द्वारा ज्ञात होती हैं। सही है?

आहाहा! देखो! बाह्य ज्ञेय-- रागादि से लेकर छहों द्रव्य अपने आत्मा से भिन्न हैं। यदि वे भिन्न न हों तो एक हो जायें; किन्तु ऐसा तो कभी होता ही नहीं है। राग और आत्मा कभी एक नहीं होते। **राग का ज्ञान होता है, उसमें कहीं राग ज्ञान की पर्याय में आता नहीं है।** दुःख ज्ञान की पर्याय में नहीं आता। **केवली भगवान को लोकालोक का ज्ञान हुआ तो लोकालोक उनके ज्ञान में प्रविष्ट नहीं हो जाता।** कहाँ आता है? वह तो लोकालोक उसीमें है।

छठवाँ पेज, **घट को जाननेवाला घटरूप नहीं हो जाता। तथा घट को जाननेवाला वास्तव में घट को जानता है ऐसा नहीं है।** घड़ा ज्ञान में तो नहीं आता लेकिन ज्ञान घट को जानता भी नहीं है। अब ये तो उनके वचन हैं। ये कोई लालुभाई की वाणी थोड़ी है? ये तो गुरुवाणी है। भाई!

मुमुक्षुः- गुरुवाणी है और ये तो ज्ञानी के वचन हैं।

उत्तरः- ज्ञानी के वचन हैं। स्वीकार कर ले, तेरा काम हो जायेगा। मैं पर को जानता हूँ ऐसा पक्ष छोड़ दे। जाननहार जानने में आता है। स्वभाव के पक्ष में तो आ। जाननहार जानने में आता है, (इस) पक्ष में आ तो पक्षातिक्रांत होगा। **तथा घट को जाननेवाला वास्तव में घट को जानता है ऐसा नहीं है। स्व-पर को जानने के ज्ञानरूप स्वयं आत्मा ही होता है।** स्वपर का प्रतिभास होता है न इसलिए। **घट को जानने के ज्ञानरूप आत्मा स्वयं ही होता है; इसलिए घट का ज्ञान नहीं, किन्तु आत्मा का ही ज्ञान (होता) है।** घड़े का कभी ज्ञान होता है? तो-तो ज्ञान घटरूप हो जाये।

अपने में तो अपने ज्ञानपरिणाम का ही अस्तित्व है, ज्ञेयों का नहीं। आत्मा का 'ज्ञ' स्वभाव है और 'ज्ञ' स्वभावी आत्मा में जाननक्रिया होती है वह स्वयं से हुई अपनी स्वयं की क्रिया है, इसमें परज्ञेयों का कुछ भी नहीं है। इसप्रकार ज्ञेयसंबंधी अपने ज्ञान का जो परिणमन हुआ, वह स्वयं ही ज्ञेय, स्वयं ही ज्ञान और स्वयं ही ज्ञाता है। समझ में आया?

अब दूसरा पैराग्राफ अच्छा आता है। अंडरलाइन की हुई है उसमें। **ज्ञेयों के आकार की झलक,** झलक समझ में आया न? जैसे दर्पण में झलक आती है न अग्नि की, ऐसे! **ज्ञेयों के आकार की** अर्थात् स्वरूप की **झलक ज्ञान में पड़ने पर ज्ञान ज्ञेयाकाररूप दिखाई देता है, परंतु वे ज्ञान की ही तरंगें हैं।** वह ज्ञान की ही पर्याय है। ज्ञेय कहाँ उसमें आये हैं? **देखो, ज्ञान ज्ञेयाकार है ऐसा नहीं, वह तो ज्ञेय को जानते समय वैसे ज्ञानाकाररूप ज्ञान स्वयं ही हुआ है।** ज्ञानाकाररूप ज्ञान

हुआ है। ज्ञेयाकाररूप ज्ञान नहीं हुआ है, आहाहा! एक-एक शब्द की कीमत है। **वैसे ज्ञानाकाररूप ज्ञान स्वयं ही हुआ है। ज्ञेय का उसमें कुछ भी नहीं है। ज्ञेय ज्ञान में प्रविष्ट हुआ है ऐसा है ही नहीं; अर्थात् ज्ञान ज्ञेयरूप होता है ऐसा है ही नहीं। ज्ञान ज्ञानाकार ही है। वे ज्ञान की ही कल्लोलें हैं,** आहाहा! ज्ञेयाकार नहीं होता। ज्ञान ज्ञानाकार रहता है।

आहाहा! कैसा भेदज्ञान कराया है! वीतराग मार्ग बहुत सूक्ष्म है भाई! जरा धीरा (शांत) होकर सुन। कहते हैं कि -- आत्मा पर को करता है या पर से आत्मा में कुछ होता है- यह बात तो बहुत दूर रह गई, यह बात तो है नहीं,

किन्तु परपदार्थ ज्ञान की पर्याय में जानने में आते हैं, ज्ञान पर को जानता है अथवा परज्ञेय ज्ञान की पर्याय में प्रवेश करें -- ऐसा भी नहीं है। फिर से, यह लाइन महत्वपूर्ण है।

मुमुक्षुः- बहुत महत्वपूर्ण है।

उत्तरः- बहुत महत्वपूर्ण है। अंडरलाइन की हुई है। **किन्तु परपदार्थ ज्ञान की पर्याय में जानने में आते हैं, ज्ञान पर को जानता है अथवा परज्ञेय ज्ञान की पर्याय में प्रवेश करें -- ऐसा भी नहीं है।** आहाहा!

मुमुक्षुः- बोलो! परपदार्थ ज्ञान की पर्याय में ज्ञात हों ऐसा नहीं है।

उत्तरः- पर अपनी ज्ञान की पर्याय में जानने में आये, राग अपनी ज्ञान की पर्याय में जानने में आये, ऐसा नहीं है। उसे जानता तो नहीं है लेकिन वह राग जानने में नहीं आता, ज्ञान में। कच्चा पारा है। यदि समझे तो काम हो जाये। लक्ष पलट जाये पूरा।

मुमुक्षुः- और यदि भूल करे तो पूरा ध्वस्त हो जाये, ऐसी बात है।

उत्तरः- (यदि) भूल करे तो ध्वस्त हो जाये। बड़ा लाभ-नुकसान का व्यापार है। बड़ा लाभ और बड़ा नुकसान।

मुमुक्षुः- यदि समझे तो लाभ-लाभ ही है।

उत्तरः- लाभ अर्थात् अल्पकाल में मुक्ति हो जाये।

मुमुक्षुः- और यदि भूल करे..

उत्तरः- धोखा खा गया।

मुमुक्षुः- तो समाप्त हो गया।

उत्तरः- समाप्त हो गया। इस भव में यदि भूला तो ऐसा भव पुनः मिलना मुश्किल है। मनुष्य भव, सच्चे देव-गुरु-शास्त्र मिलने दुर्लभ हैं। **परपदार्थ ज्ञान की पर्याय में जानने में आते हैं,** ऐसा नहीं है। **ज्ञान पर को जानता है**, ऐसा भी नहीं है। **अथवा परज्ञेय ज्ञान की पर्याय में प्रवेश करे,** ऐसा भी नहीं है, आहाहा! **वस्तु-द्रव्य एक ज्ञायकभावपने है। वह स्वयं ज्ञान की पर्यायपने, जाननक्रियारूप से होती है, वह स्वयं की स्वपरप्रकाशक की क्रिया है। आत्मा में पर जानने में आता है- ऐसा कहना व्यवहार है।** स्वपरप्रकाशक सामर्थ्य तो निश्चय है, अपना। लेकिन उसमें पर जानने में आता है ऐसा कहना वह व्यवहार से है। स्वपरप्रकाशक अभेद कहो तो निश्चय। लेकिन पर जानने में आता है ऐसा कहो तो व्यवहार हो गया, इसप्रकार! **उसमें पर जानने में आता है ऐसा**

कहना व्यवहार है, बस। (निश्चय से) पर ज्ञात नहीं होता, अपनी जाननक्रिया ही जाननेरूप है, वही ज्ञात होती है। पर ज्ञात नहीं होता, अपना ज्ञान जानने में आताहै।

मुमुक्षुः- जाननहार जानने में आता है।

उत्तरः- जाननहार जानने में आता है। ऊपर की चार लाइनों का ही विस्तार है।

मुमुक्षुः- यह समस्त आगम का सार कह दिया, यह ही है।

उत्तरः- चार लाइन में सब कह दिया था पहले। यह देखो अनुभव की कला। हम जब आत्मा के सन्मुख होते हैं तब आत्मा ही ज्ञाता, ज्ञान और ज्ञेयपने ज्ञात होता है। छह द्रव्य, देव-गुरु-शास्त्र, उपकारी गुरु ज्ञात नहीं होते। समयसार शास्त्र ज्ञात नहीं होता। जिनवाणी ज्ञात नहीं होती, आहाहा! गजब है यह तो व्याख्या। **उसमें पर जानने में आता है ऐसा कहना व्यवहार है बस। पर ज्ञात नहीं होता, अपनी जाननक्रिया ही जाननेरूप है, वही ज्ञात होती है।** अपना ज्ञान जानने में आता है। ज्ञान ज्ञात होता है ऐसा कहो या आत्मा ज्ञात होता है दोनों एक ही है। ज्ञान और आत्मा एक ही है। पर ज्ञात नहीं होता, स्व ही ज्ञात होता है। ज्ञान ज्ञात होता है अर्थात् स्व ही ज्ञात होता है, ज्ञेय ज्ञात नहीं होता, आहाहा!

ऊपर बात की, वह निर्विकल्प ध्यान की (थी)। यह सविकल्प की बात करते हैं। सविकल्प दशा में भी उर्ध्वरूप से आत्मा जानने में आता है, मुख्यरूप से, पर जानने में नहीं आता । पर गौण हो जाता है। पर का लक्ष नहीं है न इसलिए। लक्ष नहीं है। प्रतिभास होता है लेकिन जानने में नहीं आता, क्योंकि लक्ष नहीं है इसलिए। वह गौण हो जाता है। ज्ञान उर्ध्व हो जाता है। श्रीमद्जी ने कहा उर्ध्वपने ज्ञान जानने में आता है। उर्ध्वपने अर्थात् मुख्यरूप से ज्ञान ज्ञात होता है ज्ञानी को। इसलिए निर्जरा होती रहती है। यदि एक समय भी आत्मा को न जाने तो निर्जरा न रहे। सम्यग्दर्शन न रहे, टिके नहीं।

भगवान! तू इतना और ऐसा ही है; दूसरी तरह से मानेगा तो तेरे स्वभाव का घात होगा। सर्वज्ञ परमेश्वर कहते हैं - लोकालोक जानने में आये इतनी तेरी पर्याय नहीं है। तेरे ज्ञान की पर्याय में लोकालोक जानने में आये ऐसा तेरा ज्ञान नहीं है, ऐसी तेरी ज्ञान की पर्याय नहीं है। तेरा आत्मा जानने में आये ऐसी ज्ञान की पर्याय है।

मुमुक्षुः- वे तो परज्ञेय हैं, उन्हें जानने का स्वभाव ही नहीं है । अपने को जानने पर ....

मुमुक्षुः- सब समेट दिया।

उत्तरः- बहुत समेट दिया। पूरा उपयोग अंदर में आये और आत्मा का अनुभव हो जाए, भव का अंत आये, सम्यग्दर्शन हो, ऐसी यह गाथा है। **सर्वज्ञ परमेश्वर कहते हैं - कि लोकालोक जानने में आये इतनी तेरी पर्याय नहीं है, तेरी ज्ञान पर्याय को तू जान ऐसा तेरा स्वरूप है।** लोकालोक जानने में आये ऐसा तेरा स्वरूप (नहीं है), आहाहा! स्पष्ट करके गये हैं। (गुरुदेव) सब कुछ कहकर गये हैं, लेकिन कोई ध्यान देकर पढ़ता नहीं है, नहीं तो पिताजी लिख गये हैं। पिताजी का पत्र पुत्र के लिए आया, आहाहा!

मुमुक्षुः- वसीयत लिख दी।

उत्तरः- यह स्वरूप है।

मुमुक्षुः- वसीयत लिख दी कि इसका मालिक तू है। इसका स्वामी तू है, तेरे लिए रखकर जाता हूँ।

उत्तरः- तेरे लिए रखकर जाता हूँ।

मुमुक्षुः- तेरा ही है सब।

उत्तरः- तेरा ही है सबकुछ। **अपनी ज्ञान की पर्याय को तू जान ऐसा तेरा स्वरूप है। लोकालोक को जानता है- ऐसा कहना असद्भूत व्यवहार है, झूठा व्यवहार है।** केवली लोकालोक को जानते हैं (ऐसा कहना) वह झूठा व्यवहार है! सच्चा व्यवहार भी नहीं है, आहाहा! व्यवहार के पक्षवालों को कठिन पड़ता है, कठिन पड़ता है। अमृत है, अमृत। यह जो है न, यह पुस्तक तुम लंदन ले जाना और बार-बार पढ़ना। वे अक्षर बारीक हैं। ये बड़े अक्षर पढ़ने में तुम्हें ठीक रहेगा। ये ग्यारहवें भाग में है सही, लेकिन बारीक अक्षर हैं।

मुमुक्षुः- उसमें तो पूरा शास्त्र निकालना पड़ता है, यह एक अलग जब मन हो तब (पढ़ लो)।

उत्तरः- हाँ, एक अलग, जब चाहे तब स्वाध्याय , मन हो तब स्वाध्याय कर सकते हो।

मुमुक्षुः- दूसरे भागों की अपेक्षा ग्यारहवें में (अक्षर) ज्यादा बारीक हैं।

उत्तर- हाँ, ग्यारहवें भाग में ज्यादा बारीक हैं। भूल हो गई है। दसवें भाग में अच्छे थे। इसलिए मैं तो वो पढ़ ही नहीं सकता इसलिए मैंने अपने लिए जेरॉक्स करा ली। और फिर इसपर प्रवचन करता था इसलिए बुक छपवा ली । ऐसी चार सौ पुस्तक उन्होंने छपवाई हैं। पर्युषण में (सभा में) पढ़ते थे न इसलिए सामने सबके पास हो न,

मुमुक्षुः- जी, (तो) ज्यादा मजा आवे।

उत्तरः- हाँ।

सातवाँ पेज- **आत्मा स्वयं जानने के भाववाला तत्त्व होने से** तत्त्व अर्थात् स्वरूप, आत्मा का स्वरूप ही ऐसा है, **होने से लोकालोक के जितने ज्ञेय हैं उनको तथा स्वयं को जानने की क्रियारूप से अपने में, (अपने अस्तित्व में) अपने कारण से परिणमित होता है। वस्तुतः तो यह ज्ञान की पर्याय ज्ञेय है।** लोकालोक ज्ञेय नहीं है।

मुमुक्षुः- अपनी ज्ञान की पर्याय वह ही ज्ञेय है।

उत्तरः- **ज्ञान की पर्याय का पर (पदार्थ) ज्ञेय है-- ऐसा कहना व्यवहार है। ऐसी बात है।** ज्ञान, ज्ञान को जानता है वह सत्य बात है। ज्ञान पर को जानता है ऐसा कहना व्यवहार, उपचार है। उपचार के कथन हैं, सभी, आहाहा! **ज्ञेयों के आकार अर्थात् ज्ञेयों के विशेष** अर्थात् उसके द्रव्य, गुण, पर्याय - भेद, **अपनी ज्ञानपर्याय में झलकते हैं अर्थात् ज्ञेयों संबंधी अपना ज्ञान अपने में अपने से परिणमता है। वह ज्ञान ज्ञेयाकार दिखता है -- ऐसा कहा किन्तु अपना ज्ञान ज्ञेयाकार हुआ नहीं है।** अर्थात् ज्ञेय को जानता ही नहीं है।

ये झवेरचंदभाई लंदन रहते हैं, लंदन से आये हैं। थोड़े दिन सोनगढ़ रहे थे। तुम मुंबई थे। तब थोड़े दिन सोनगढ़ रहकर आये।

२७१ के ऊपर गुरुदेव के प्रवचन, बुक है न?

मुमुक्षुः- हाँ, यह आप लो-लो।

मुमुक्षुः- ना-ना, इनके पास है-है, चलेगा-चलेगा।

उत्तरः- कोई बात नहीं। सातवाँ पेज है, दूसरा पैराग्राफ, बीच में है। **वह ज्ञान ज्ञेयाकार दिखता है -- ऐसा कहा किन्तु वह ज्ञेयाकार हुआ नहीं है, वह तो ज्ञानाकार अर्थात् ज्ञान की ही तरंगें हैं। आहाहा! जानना-जानना-जानना ही अपना स्वभाव है,** आहाहा! **उसमें परवस्तुओं का-परज्ञेयों का प्रवेश नहीं है, तथापि उनका जानना यहाँ (-अपने ज्ञान में) होता है वह वस्तुतः उनका** अर्थात् **(परज्ञेयों) का जानना नहीं है।** कितने स्पष्ट शब्द हैं ! हें? आहाहा! खुलासा। कितना खुलासा! **जानने की अपनी दशा है उसका जानना है।** दशा को जानता है। ज्ञान ज्ञान को जानता है, ज्ञेय को नहीं। आहाहा! **यह न्याय से तो बात है; उसे समझनी तो पड़े न!** आहाहा! **दूसरा कोई थोड़े ही समझा देगा?**

मुमुक्षुः- पढ़े तो ख्याल आये कि यहाँ बहुत वजन दिया है इस बात में।

उत्तरः- बहुत वजन, बहुत वजन दिया है। पढ़े तो ख्याल में आ जाये।

देखो, दर्पण के दृष्टांत से यह बात समझाते हैं: जिसप्रकार दर्पण के सामने कोयला, अग्नि वगैरह रखे हों वे दर्पण में दिखाई देते हैं। किन्तु वे दर्पण से भिन्न चीज हैं न? दर्पण में तो उन पदार्थों की झलक दिखती है, कोयला वगैरह। **किन्तु क्या कोयला और अग्नि वगैरह दर्पण में हैं? दर्पण में तो दर्पण की स्वच्छता का अस्तित्व है। यदि अग्नि ने दर्पण में प्रवेश किया होता तो दर्पण अग्निमय हो जाता, उसे हाथ लगाने पर हाथ जल जाता; परन्तु ऐसा तो होता नहीं है। दर्पण अपनी स्वच्छता के परिणाम से स्वयं ही अपने से परिणमा है; कोयले या अग्नि का उसमें कुछ भी नहीं है। समझ में आया?** आहाहा!

वह निमित्त है और यह नैमित्तिक है वह निकाल दिया, क्योंकि वह व्यवहार निकाल देना है न यह तो? क्योंकि ज्ञाता-ज्ञेय को अंदर अभेद करना है न? वह ज्ञेयाकार होता ही नहीं है, ऐसा कहना है न? यह निमित्त है और यह नैमित्तिक है (ऐसा कहेंगे), तो-तो व्यवहार हो जायेगा।

मुमुक्षुः- तो-तो व्यवहार सिद्ध हो जायेगा।

उत्तरः- उस व्यवहार का यहाँ निषेध करके निश्चय में पहुँचाना है। कहीं निमित्त शब्द नहीं आता, देखना। झलकता है इतना आता है, बाकी निमित्त है और यह नैमित्तिक- ऐसा नहीं (आता)। नहीं तो ज्ञेयाकार सिद्ध हो जाये। यहाँ ज्ञानाकार सिद्ध करना है।

मुमुक्षुः- .....हो जाये?

उत्तरः- आत्मा है, वही आत्मा है।

ये क्या कहा? लो, फिर से। एक तरफ दर्पण है, और उसके सामने एक तरफ अग्नि और बरफ है। अग्नि अग्नि में लबक-झबक होती है। अग्नि अग्नि में लबक-झबक होती है, ऊंची नीची होती है न, अग्नि की ज्वाला। **और बरफ बरफ में पिघलता जाता है,** पानी होता जाता है। **उस समय दर्पण में भी बस ऐसा ही दिखता है।** वहाँ जैसा होता है ऐसा यहाँ दिखता है, दिखता है, ठीक है! **तो क्या दर्पण में अग्नि और बरफ है? नहीं;** दिखते हैं इसलिए उसमें आ गये? नहीं। **अग्नि और बरफ**

का अस्तित्व तो बाहर अपने अपने में है, दर्पण में उनका अस्तित्व नहीं है, दर्पण में वे प्रविष्ट नहीं हुये हैं। दर्पण में तो दर्पण की उस-रूप स्वच्छ दशा हुई है वह है। अग्नि और बरफ संबंधी दर्पण की स्वच्छता की दशा वह दर्पण का स्वयं का परिणमन है। अपनी स्वतंत्र शक्ति है, स्वच्छतारूप परिणमता है। अग्नि, बर्फ आदि के कारण से कुछ नहीं है, वे भिन्न हैं और यह भिन्न है। **अग्नि और बरफ का उसमें कुछ भी नहीं है।** निमित्त है ऐसा नहीं कहा बिल्कुल।

मुमुक्षुः- वह मार्मिक बात है।

उत्तरः- हाँ! निमित्त स्थापित करें तो व्यवहार हो गया, तो ज्ञेयाकार सिद्ध हो जाये। यहाँ ज्ञेयाकार को उड़ाना है, ज्ञानाकार स्थापित करना है।

मुमुक्षुः- निमित्त कहें तो-तो ज्ञेयाकार सिद्ध हो जाये।

उत्तरः- अर्थात् अनादि का ज्ञाता-ज्ञान का व्यवहार जो है उसे सत्य माने तो मिथ्यात्व का दोष लगता है, ऐसा आता है। व्यवहार सच्चा लगा है न अनंतकाल से? दूसरा क्या? व्यवहार सत्य लगा "मैं ज्ञाता और यह ज्ञेय"। ऐसा नहीं है। मैं ज्ञाता और मैं ही ज्ञेय हूँ। यह मूल गाथा में यह कहना है। यही कहना है। **बरफ का उसमें कुछ भी नहीं है; अग्नि और बरफ ने उसमें कुछ भी नहीं किया, वे तो भिन्न पदार्थ हैं।**

आगे, **इसीप्रकार भगवान आत्मा स्वच्छ चैतन्य दर्पण है।** वह दर्पण का दृष्टांत दिया। ऐसे यह भगवान आत्मा दर्पण के समान स्वच्छ है। **उसके ज्ञान में ज्ञेयों के आकार की** अर्थात् जैसा स्वरूप हो वैसे स्वरूप की **झलक पड़ने पर ज्ञान ज्ञेयाकार दिखाई देता है।** ज्ञेयाकार होता नहीं है, ज्ञेयाकार दिखाई देता है। **ज्ञान के सामने जैसे ज्ञेय होते हैं, उसीप्रकार की विशेषतारूप से अपनी ज्ञान की दशा होने पर ऐसा प्रतीत होता है कि ज्ञान ज्ञेयाकार हो गया है; परंतु ज्ञान ज्ञेयाकार हुआ ही नहीं है,** किसी भी काल में, किसी भी काल में, हों! आज तक। यह तो अंतर में जाने का पाठ है, आहाहा! किसी काल में हुआ ही नहीं है।

ज्ञेयाकार होता ही नहीं। ज्ञेयाकार यदि हो जाये तो ज्ञान का नाश हो जाये। ज्ञानाकारपना छोड़ता नहीं और ज्ञेयाकारपना आता नहीं। कहा जाता है, कहा जाता है, कथनमात्र, लेकिन ऐसा है नहीं। **ऐसा प्रतीत होता है कि ज्ञान ज्ञेयाकार हो गया है; परंतु ज्ञान ज्ञेयाकार हुआ ही नहीं है,** होता है और फिर उसका अभाव करना, ऐसा नहीं है। हुआ ही नहीं है। मूल में भूल है। **ज्ञानाकार है;** देखो! **ज्ञेयाकार हुआ ही नहीं है, ज्ञानाकार है;** ज्ञानाकार होता है, ऐसा नहीं।

मुमुक्षुः- ज्ञानाकार ही है।

उत्तरः- ज्ञानाकार ही है, अनादि अनंत, आहाहा! वास्तव में इस पुरुष का जन्म कोई अलौकिक! और उनकी वाणी चमत्कारिक! और उसे समझे तो भव का अंत आ जाये। बस! इतना स्पष्ट है, किसी को पूछना न पड़े। शांति से घर बैठकर पढ़े, समाधान आ जाये अंदर में। ये (गुरुदेव) सच्चे हैं ऐसा रखना मन में। गुरुतत्त्व सच्चा है, बस! मुझे उन्हें समझने का प्रयत्न करना।

मुमुक्षुः- जो गुरु ने वचन कहे हैं वे वचन सत्य हैं।

उत्तरः- सत्य हैं। मुझे उन्हें समझने का प्रयत्न करना।

मुमुक्षुः- मेरी जो समझने की भूल है वह इनके कहे वचनों के...

उत्तरः- द्वारा निकल जायेगी, बस!

ऐसा प्रतीत होता है कि ज्ञान ज्ञेयाकार हो गया है; परंतु ज्ञान ज्ञेयाकार हुआ ही नहीं है, ज्ञानाकार है; अर्थात् वे ज्ञेय की कल्लोलें नहीं हैं, बल्कि ज्ञान की ही कल्लोलें ज्ञान की ही पर्यायें **हैं।** ज्ञेय की पर्याय वह कहाँ यहाँ आती है? **ज्ञान की ही दशायें हैं; ज्ञेयों का उसमें कुछ भी नहीं है।** आहाहा! यहाँ ज्ञान होता है उसमें ज्ञेय कारण नहीं है। कुछ भी नहीं है। उपादान कारण भी नहीं और वह निमित्त कारण भी नहीं है, आहाहा! वहाँ ज्ञेय है इसलिए यहाँ ज्ञान होता है ऐसा कहाँ है? ज्ञान तो ज्ञान से होता है।

मुमुक्षुः- ज्ञेय कारण भी नहीं है और ज्ञेय कर्म भी नहीं है।

उत्तरः- नहीं है। बिल्कुल नहीं है।

मुमुक्षुः- इसलिए ज्ञेय से ज्ञान नहीं होता और ज्ञेय का भी ज्ञान नहीं होता।

उत्तरः- ज्ञेय का (ज्ञान) हो तो तो ज्ञेय हो जाये ज्ञान, नाश हो जाये ज्ञान। आहाहा! ऐसा तो होता नहीं है। आहाहा! **समझ में आया?** ऐसा कि कुछ समझ में आया, यदि सब समझ में आ जाये तो निहाल हो जाये, ऐसा गुरुदेव कहते। आहाहा! बहुत सूक्ष्म बात कर गये हैं, हों! कर गये हैं। **आहा! ऐसी अपने अस्तित्व की महिमा जाने बिना भाई! तू दया, दान, व्रत, तप कर-करके सूख जाये तो भी रंचमात्र भी धर्म नहीं होगा। अपने स्वरूप के माहात्म्य (-महिमा) के बिना धर्म की क्रिया कभी नहीं हो सकती।**

छोटी उम्र की बात है। पालेज में पिताजी की दुकान थी। वह बंद करके रात को महाराज उपाश्रय में आये हों स्थानकवासी, **वहाँ उनके पास जाते थे।** छोटी उम्र में। **वहाँ महाराज गाते थे-**

"भूधरजी तुम्हें भूला रे भटकता हूँ भववन में,
कुत्ते के भव में मैंने ढूंढकर खाये टुकड़े, वहाँ भूख के सहे भड़के रे"

अब इसमें तत्त्व की कुछ खबर नहीं थी, लेकिन सुनकर उस समय राजी-राजी हो जाते। लोक में भी सभी जगह ऐसा ही चल रहा है न! स्वयं कौन और कितना है उसकी खबर नहीं मिलती, और लग जाता है व्रत, तप, भक्ति, पूजा आदि करने; ऐसा मानकर कि उससे धर्म होगा लेकिन धूल में भी धर्म नहीं होगा। लेशमात्र धर्म नहीं होगा! **स्वयं कौन है उसकी खबर बिना किसमें धर्म होगा? बापू! मैं ज्ञानस्वभाव हूँ ऐसा भूलकर राग के कर्तापने में लगा रहे वह तो पागलपन है।** आहाहा! पागलपन लिखा है। **दुनिया पूरी ऐसी पागल है। समझ में आया?**

आहाहा! यहाँ कहते हैं कि- 'ये ज्ञान की कल्लोलें ही ज्ञान से ज्ञात होती हैं। ' अपने अस्तित्व में दया, दान आदि के भाव, या शरीर, मन, वाणी आदि परज्ञेयों का प्रवेश नहीं होता, वे तो भिन्न- पर हैं। दया के भाव भिन्न हैं। गुरुदेव की भक्ति का भाव भी भिन्न है, राग, इसप्रकार! **भिन्न- पर हैं; इसलिए जानने की क्रिया ही ज्ञान से,** आहाहा! **आत्मा से ज्ञात होती है। जो दया आदि के परिणाम होते हैं, उन्हें जानने की क्रिया आत्मा की है और वे इसके ज्ञेय हैं, किन्तु वे**

दया आदि के परिणाम परमार्थ से आत्मा के नहीं हैं और परमार्थ से वे आत्मा के ज्ञेय भी नहीं हैं। ज्ञेय को उड़ा दिया, आहाहा! ज्ञेय तो आत्मा है। ज्ञान है, ज्ञेय है। लो, समय हो गया। नौवें पृष्ठ तक आये। दस पृष्ठ हैं ये।

मुमुक्षुः-फिर से, दया के परिणाम वहाँ से।

उत्तरः- हाँ, हाँ, ठीक, फिर से लेंगे, फिर से लेंगे। दया के परिणाम जो होते हैं वे उसका ज्ञेय नहीं हैं, किन्तु दया के परिणाम जिसमें ज्ञात होते हैं ऐसी ज्ञान की पर्याय ज्ञेय है। वह ज्ञान की पर्याय ज्ञेय है और दया के परिणाम वास्तव में परमार्थ से ज्ञेय भी नहीं हैं। दया संबंधी जो ज्ञान हुआ वह ज्ञान की पर्याय उसका ज्ञेय कहलाती है लेकिन दया के परिणाम ज्ञेय भी नहीं हैं, ऐसा कहते हैं। कल लेंगे फिर से, कल लेंगे।

मुमुक्षुः- आपने लिया था न एक बार, जाने वह कर्ता और जानने में आये वह कर्म।

उत्तरः- कर्म हो जाता है, हाँ।

मुमुक्षुः- दया के परिणाम जानने में आयें तो कर्म हो जाएं।

उत्तरः- कर्म हो जाते हैं। जाने तो उसका कर्ता बन जाए। कल लेंगे।